सरल कानूनी ज्ञान माला - 9

भूमिका

पक्षकारों के बीच विवाद को तय करने के तीन ही तरीके हैं, पहला यह कि विवाद के निस्तारण हेतु न्यायालय में मुकदमा दायर किया जाये जिसमें न्यायालय दोनों पक्षकारों का साक्ष्य लेखबद्ध करके अपने निर्णय द्वारा डिक्री पारित करती है। न्यायालय द्वारा विवाद निस्तारण करने के तरीके में पहले वाद योजित करना होता है जिसमें सिविल प्रक्रिया संहिता की सभी औपचारिकताओं को पूरा करना होता है और सुनवाई के दौरान पक्षकारों द्वारा जो साक्ष्य प्रस्तुत किया जाता है उसको भी साक्ष्य अधिनियम के प्राविधानों के अनुसार ही ग्राह्य किया जा सकता है अत: न्यायालय की प्रक्रिया तकनीकी एवं क्लिष्ठ होती है और इसमें समय लगना स्वाभाविक ही है। विवाद निस्तारण करने का दूसरा तरीका पक्षकारों की सहमति से मध्यस्थ की नियुक्ति करके उसको विवाद के निस्तारण के लिए निर्दिष्ट करना है जिसमें मध्यस्थ के लिए यह बाध्यकर नहीं होता है कि वह सिविल प्रक्रिया संहिता एवं साक्ष्य अधिनियम के प्राविधानों का अनुपालन करें। इसमें मध्यस्थ द्वारा जो विवादों के निस्तारण सम्बन्धी निर्णय दिया जाता है उसे अवार्ड या पंचाट कहते हैं जो कि न्यायालय की डिक्री के समान होता है। विवाद निस्तारण का तीसरा तरीका सुलह के माध्यम से किया जाता है जिसमें पक्षकार अपने विवाद को सुलह द्वारा तय करने के लिए जब तैयार हो जाते हैं तो उनके बीच सुलहकर्ता दोनों पक्षकारों की दलीलों को पढ़कर इस बात का प्रयास करते हैं कि दोनों पक्षकारों के बीच सुलह हो जाये और पक्षकारों द्वारा ही सुलहकर्ता के सहयोग से समझौता निष्पादित किया जा सकता है जिसकी सुलहकर्ता पुष्टि करता है, इसमें न तो किसी प्रकार का साक्ष्य लेखबद्ध करना पड़ता है और न ही किसी प्रकार के सिविल प्रक्रिया संहिता या साक्ष्य अधिनियम के प्राविधानों के पालन करने की आवश्यकता है और यह सीधा एवं सुगम तरीका सुलहकर्ता के माध्यम से पक्षकारों के विवादों को निस्तारण सुलह करने का है। मध्यस्थ एवं सुलहकर्ता द्वारा विवादों के निस्तारण सम्बन्धी कानून का नाम मध्यस्थ एवं सुलह अधिनियम 1996 है, जिसके मुख्य महत्वपूर्ण प्राविधानों का यहां संक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है।

1. पक्षकारों के चुने हुए मध्यस्थों द्वारा विवादों का निस्तारण कराने को माध्यस्थम कहते हैं :-

पक्षकारों के बीच जब विवाद उत्पन्न होता है तो उन विवादों के समाधान के लिए किसी पक्षकार को न्यायालय की शरण लेकर दूसरे पक्षकार के विरूद्ध मुकदमा दायर करना पड़ता है। इस मुकदमे के दायर करने से पहले न्यायालय में उसकी विधिवत कोर्ट फीस भी अदा करनी होती है और मुकदमे को दायर करने की औपचारिकता पूरी करने के लिए वकीलों की सहायता ली जाती है तब न्यायालय में मुकदमों की कार्यवाही प्रारम्भ होती है। परन्तु जहां तक माध्यस्थम द्वारा पक्षकारों के विवादों के निस्तारण का प्रश्न है उसमें केवल मात्र पक्षकार अपने ही चुने हुए मध्यस्थों को विवाद के निस्तारण हेतु निर्दिष्ट करके मध्यस्थ के सम्मुख कार्यवाही प्रारम्भ कर सकते हैं जो दोनों पक्षकारों को सुनने के बाद अपना निर्णय अर्थात पंचाट देता है जिसमें न्यायालय की किसी प्रकार की औपचारिकता का झंझट नहीं उठाना पड़ता है। इस प्रकार जहां पक्षकार अपने विवादों के हल के लिए न्यायालय में मुकदमा न दायर करके किसी ऐसे व्यक्ति को मध यस्थ बनाने के लिए सहमत हो जाते हैं जो उनके विवादों का निपटारा करें तो पक्षकारों की रजामन्दी से नियुक्त किये गये व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा जो विवादों का निपटारा किया जाता है उसको माध्यस्थम कहा जाता है।

2. माध्यस्थम से विवादों के निस्तारण करने के मुख्य लाभ :

(क) पक्षकारों के कई मामले तकनीकी प्रकृति के होते हैं जिनको समझने के लिए विशेष तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है इसलिए ऐसे तकनीकी मामलों के झगड़ों का निस्तारण ऐसा ज्ञान रखने वाले विशेष व्यक्तियों को मध्यस्थ के रूप में नियुक्त करके विवादों का समाधान आसानी से कराया जा सकता है। जबकि दूसरी ओर ऐसे विशेष तकनीकी मामलों के संबंध में न्यायालय को तकनीकी ज्ञान की जानकारी लेनी पड़ती है इसलिए शायद न्यायालय द्वारा ऐसे मामलों का आसानी से तय किया जाना कठिन हो जब कि तकनीकी ज्ञान वाले किसी इंजीनियर को मध्यस्थ के रूप में अपने विवादों का निस्तारण करने हेतु नियुक्त किये जाने पर वह सुगमता से इसमें अपना निर्णय दे सकता है।

(ख) माध्यस्थम में न्यायालयों की अपेक्षा शीघ्र वादों का निपटारा किया जाता है क्योंकि न्यायालय में वैसे ही मुकदमे का अम्बार होता

है और यह भी निश्चित नहीं होता कि मुकदमा निर्धारित तिथि पर सुनवाई के लिए लिया जाता भी है या नहीं। न्यायालय में प्राय: मुकदमों में तारीख पर तारीख पड़ती रहती है इसलिए यह भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि गवाह नियत तिथि पर उपस्थित हों तो उनका साक्ष्य भी न्यायालय द्वारा उसी तारीख पर लिया जाना सम्भव होगा जबकि दूसरी तरफ माध्यस्थम के साथ ऐसी कोई समस्या नहीं है उसके पास यही एक मामला सुनवाई के लिए होता है जिससे कि वह निर्धारित तिथि पर न केवल सुनवाई कर सकता है बल्कि इसका निर्णय भी शीघ्रातिशीघ्र करने में सक्षम होता है जिससे पक्षकारों को कम परेशानी होती है और माध्यस्थ कार्यवाही न्यायालय के सम्मुख चल रही कार्यवाही से कम खर्चीली होती है।

(ग) चूंकि पक्षकारों की सहमति से ही माध्यस्थ नियुक्त किया जाता है इसलिए पक्षकारों की सुविधा को देखते हुए विवादों की सुनवाई का स्थान व समय भी बदला जा सकता है। इसी प्रकार माध्यस्थ विवादग्रस्त स्थल, विषय या वस्तु का निरीक्षण कर सकता है जबकि न्यायालय के समक्ष समय का अभाव होने के कारण निरीक्षण करना सम्भव नहीं होता है। इसलिए माध्यस्थम द्वारा विवादग्रस्त वस्तु का अवलोकन एक बार हो जाने से पक्षकारों के विवादों को समझने एवं शीघ्र निपटारा करने में सहायता मिलती है।

(घ) क्योंकि न्यायालय को कार्यवाही को विधिसम्मत प्रक्रिया एवं औपचारिकताओं से पूरी करना होता है जबकि माध्यस्थ कार्यवाही में उभय पक्षकार अपनी सहमति से सरल प्रक्रिया अपना सकते हैं और मध्यस्थ पर यह बाध्यकर नहीं होता कि वह सिविल प्रक्रिया संहिता एवं साक्ष्य अधिनियम की जटिल एवं तकनीकी प्रक्रिया को ही अपनाये। अत: मध्यस्थम द्वारा की गयी कार्यवाही न्यायालय की तरह मुख्य दर्शष्ट तकनीकी एवं जटिल प्रक्रिया की न रहकर विशेष रूप से वास्तविक न्याय पर केन्द्रित रहती है।

3. माध्यस्थम के लिए आवश्यक तत्व क्या है :-

माध्यस्थम के लिए आवश्यक तत्वों में मुख्य तत्व यह है कि पक्षकारों के बीच लिखित माध्यस्थम करार अस्तित्व में होना चाहिए जिसके अंतर्गत विवाद उत्पन्न होने की स्थिति में उसका निस्तारण मध्यस्थों द्वारा करने की व्यवस्था हो तथा इस माध्यस्थम करार के अनुसार ही पक्षकारों के बीच विवाद उत्पन्न होने पर नियुक्त किये गये मध्यस्थ को विवादों का निस्तारण कराने के लिए निर्दिष्ट किया जाता है मध्यस्थ पक्षकारों के कथनों पर विचार करने एवं साक्ष्य लेखबद्ध करने के बाद अपना निर्णय पंचाट के रूप में देता है जिस पर यदि किसी पक्षकार की कोई आपत्ति हो तो उसका निस्तारण करने के बाद वह पंचाट पक्षकारों पर बाध्यकर होता है। अत: माध्यस्थम के मुख्य तत्वों को इस प्रकार उल्लिखित किया जा सकता है।

(1) पक्षकारों के मध्य लिखित करार का अस्तित्व में होना।

(2) विवादों का उत्पन्न होना, जो कि माध्यस्थ द्वारा तय किया जाता है।

(3) विवादों के निस्तारण करने हेतु मध्यस्थ को निर्दिष्ट किया जाना।

(4) मध्यस्थ द्वारा पक्षकारों को सुनने के बाद पंचाट तैयार किया जाना।

(5) पंचाट पर पक्षकारों की यदि कोई आपत्ति हो तो उसका निस्तारण करने के बाद पंचाट का उभय पक्षकारों पर आबद्धकर होना।

4. माध्यस्थम सम्बन्धी विधि के मुख्य प्राविधान :

(क) माध्यस्थम संबंधी पूर्ण विधि की व्यवस्था माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम 1996 में की गयी है :-

इस अधिनियम की धारा-7 में यह उपबन्ध किया गया है कि जब पक्षकार अपने विवादों का निपटारा न्यायालय से न कराकर अपनी सहमति से नियुक्त किये गये मध्यस्थों से कराने चाहते हैं तो उनके बीच माध्यस्थम करार होना परम आवश्यक है। पक्षकारों के बीच ऐसे माध्यस्थम करार के लिए आवश्यक है कि वह लिखित रूप में होनी चाहिए और यदि माध्यस्थम करार किसी दस्तावेज के रूप में हो तो उसमें दोनों ही पक्षकारों के हस्ताक्षर होने परम आवश्यक है। यदि पक्षकारों के बीच में लिखे गये पत्राचार इत्यादि पर पक्षकारों द्वारा विवादों को निस्तारण करने हेतु सहमति जताई जाती है तो वह भी माध्यस्थम करार की प्रकृति में सम्मिलित होगा और उस पर दोनों पक्षों के हस्ताक्षर होने आवश्यक नहीं है।

(ख) मध्यस्थों की नियुक्ति करके उनको विवादों को निपटाने हेतु निर्दिष्ट किया जना :-

जब पक्षकारों के बीच में कोई विवाद उत्पन्न होता है तो उसका निस्तारण पक्षकारों के बीच माध्यस्थम करार के अनुसार सीधे न्यायालय से कराया नहीं जा सकता बल्कि उसे माध्यस्थम द्वारा ही कराया जाना बाध्यकर है। इस माध्यस्थम करार के अनुसार मध्यस्थों की नियुक्ति की जाती है और तभी मध्यस्थ पक्षकारों के विवादों की सुनवाई प्रारम्भ कर सकते हैं। यदि कोई भी पक्षकार करार के अनुसार मध्यस्थों की नियुक्ति करने में आनाकानी करता है तो दूसरे पक्षकार इस अधिनियम की धारा–11 के अनुसार न्यायालय की सहायता से मध्यस्थ की नियुक्ति करा सकता है। इसमें एक पक्षकार दूसरे पक्षकार को नोटिस मिलने के 30 दिन के अन्दर वह पक्षकार माध्यस्थम करार के अनुसार मध्यस्थ की नियुक्ति नहीं करता तो अधिनियम की धारा–11 के अनुसार न्यायालय की सहमति से मध्यस्थ की नियुक्ति करायी जा सकती है और जिसके पश्चात नियुक्त किये गये मध्यस्थ को कार्यवाही प्रारम्भ करके अपना निर्णय देना होता है।

(ग) मध्यस्थ की शक्तियां :–

मध्यस्थ का कार्य न्यायालय के न्यायाधीश की तहत ही पक्षकारों को सुनने के बाद अपना निर्णय पंचाट के रूप में देना होता है परन्तु मध्यस्थ की शक्तियां माध्यस्थम करार से ही जुड़ी होती है हैं जिसके अनुरूप ही मध्यस्थ को अपनी शक्तियों का प्रयोग करना होता है। इस अधिनियम की धारा–19 में यह स्पष्ट प्राविधान किया गया है कि मध्यस्थ न्यायालय की तरह सिविल प्रक्रिया संहिता एवं साक्ष्य अधिनियम की औपचारिकताओं को अपनाने के लिए बाध्यकर नहीं हैं। यदि पक्षकारों द्वारा माध्यस्थम करार में ही मध्यस्थ की नियुक्ति के संबंध में तथा उसके द्वारा विवादों के निस्तारण हेतु अपनाई जाने वाली प्रक्रिया की व्यवस्था कर दी जाती है तो उसी के अनुसार ही मध्यस्थ को अपनी कार्यवाही करके निर्णय देना होता है। इसलिए यदि पक्षकार यह चाहते हैं कि उनके विवादों का निस्तारण दस्तावेजों के आधार पर ही कर दिया जाये तो मध्यस्थ के लिए यह जरूरी नहीं है कि वह पक्षकारों का मौखिक साक्ष्य लेखबद्ध करें। इसी प्रकार माध्यस्थम करार में अन्य जो भी प्राविधान किये गये हैं उन्हीं के अनुसार ही मध्यस्थ अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए विवादों के निस्तारण हेतु अपना निर्णय अर्थात पंचाट दे सकता है।

(घ) पक्षकारों की रजामन्दी से सुनवाई का स्थान निर्धारित करना:–

पक्षकारों के बीच विवाद उत्पन्न होने पर इस अधिनियम की धारा–20 में पक्षकारों को यह स्वतंत्रता दी गयी है कि वह माध्यस्थम कार्यवाही के स्थान को नियत कर सकते हैं जिसके अनुसार ही उस स्थान पर पक्षकारों के विवादों की सुनवाई की जायेगी और उसी तरह जिस भाषा में पक्षकार चाहते हैं कि उनकी यह सुनवाई की जाय उसी भाषा का मध्यस्थ को प्रयोग करना होगा जैसा कि इस अधिनियम की धारा–22 में भी यह प्राविधानित किया गया है।

(ड़) मध्यस्थ साक्ष्य को लेखबद्ध करने के लिए न्यायालय की सहायता प्राप्त कर सकता है :–

माध्यस्थम कार्यवाही की सुनवाई में दस्तावेज एवं साक्ष्य लेखबद्ध करना होता है। यदि मध्यस्थ यह समझता है कि किसी व्यक्ति से दस्तावेज दाखिल करने की आवश्यकता है या किसी व्यक्ति का साक्ष्य लेखबद्ध किया जाना है तो उसके लिए वह सम्बन्धित सिविल न्यायालय की सहायता लेकर साक्षी को सम्मन भिजवाने की सहायता ले सकता है जिस पर यदि न्यायालय द्वारा भेजे गये ऐसे सम्मन की तामीली के बाद भी वह व्यक्ति साक्ष्य के लिए उपस्थित नहीं होता है या दस्तावेज दाखिल नहीं करता है तो उस स्थिति में इस अधिनियम की धारा–27 में यह स्पष्ट व्यवस्था की गयी है कि ऐसे व्यक्ति के विरूद्ध न्यायालय के अनुरूप ही दण्डित करने की कार्यवाही की जा सकती है।

(च) मध्यस्थ द्वारा सुनवाई के बाद पंचाट तैयार किया जाना :–

जब मध्यस्थ विवादों का निपटारा करने के लिए पक्षकारों की सुनवाई पूरी कर लेता है तो विवादों के निस्तारण हेतु जो वह निर्णय देता है उसको पंचाट कहा जाता है। इस पंचाट का क्या स्वरूप होना चाहिए इसकी व्यवस्था अधिनियम की धारा–31 जिसके अनुसार मध्यस्थ द्वारा जो पंचाट तैयार किया जाता है उसे लिखित रूप में होने के साथ–साथ मध्यस्थ के हस्ताक्षर होना आवश्यक है। इस पंचाट में उन सभी कारणो का उल्लेख किया जाना आवश्यक है जिनके आधार पर निष्कर्ष दिये गये थे। मध्यस्थ द्वारा दिये गये पंचाट में जिस तिथि में पंचाट तैयार किया गया वह तिथि एवं स्थान जहाँ पर उसकी सुनवाई की गयी उसका उल्लेख किया जाना आवश्यक है और पंचाट की एक–एक हस्ताक्षरित प्रति सम्बन्धित पक्षकारों को दी जायेगी ताकि उनको

यदि पंचाट कार्यवाही के विरूद्ध कोई आपत्ति हो तो उसके लिए वह उचित कार्यवाही कर सके।

(छ) मध्यस्थ के पंचाट पर पक्षकारों द्वारा आपत्ति न किये जाने पर वह अन्तिम होने पर पक्षकारों पर बाध्यकर होता है :-

मध्यस्थ द्वारा विवादों के निस्तारण के बाद जो निर्णय दिया जाता है अर्थात जो पंचाट तैयार किया जाता है उसका विधिवत निष्पादन विवादग्रस्त सम्पत्ति के मूल्यांकन के अनुसार देय स्टाम्प ड्यूटी के दस्तावेज पर किया जाता है और यदि वह पंचाट अचल सम्पत्ति से सम्बन्धित है तो उसका रजिस्ट्रेशन किया जाना आवश्यक है परन्तु यह तभी किया जाना सम्भव है जब ऐसे पंचाट पर यदि पक्षकारों को कोई आपत्ति है तो उस आपत्ति का विधिवत निस्तारण करते हुए पंचाट को बरकरार रखा गया हो। जब पंचाट के विरूद्ध किसी पक्षकार को कोई आपत्ति नहीं होती तो उस स्थिति में पंचाट फाईनल होने के परिणामस्वरूप दोनों पक्षों पर बाध्यकर होगा। इसके लिए न्यायालय आदेश की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि ऐसे पंचाट बिना न्यायालय के आदेश के ही न्यायालय की डिक्री की तरह प्रभावी माने जायेंगे।

(ज) पंचाट को पक्षकार कब और कैसे अपास्त करा सकते हैं :-

मध्यस्थ द्वारा जो पंचाट दिया जाता है उससे पक्षकारों का प्रभावित होना स्वाभाविक ही है और यदि कोई पक्षकार यह अनुभव करता है कि मध्यस्थ द्वारा पंचाट से कोई गलती की गई है और पंचाट को आपास्त किया जाना जरूरी है तो उस स्थिति में वह अधिनियम की धारा-34 के अनुसार न्यायालय में आवेदन करके ऐसे पंचाट को अपास्त करने की कार्यवाही कर सकता है। इस धारा के अनुसार जो पक्षकार ऐसे किसी पंचाट को अपास्त कराना चाहता है तो पंचाट की प्रति मिलने से तीन महीने के अंदर ही पंचाट में आपत्तियां दाखिल करते हुए न्यायालय में इसे अपास्त कराने के लिए आवेदन करना होता है जिस पर न्यायालय दोनों पक्षकारों को नोटिस देने के बाद एवं सुनवाई के पश्चात यदि आपत्तियों को सारपूर्ण पाती है तो न्यायालय ऐसे पंचाट को अपास्त करने का आदेश पारित कर सकती है। अत: जब पंचाट के विरूद्ध दाखिल आपत्तियां खारिज कर दी जाती हैं तो वह पंचाट इस अधिनियम की धारा-35 के अन्तर्गत फाईनल मानते हुए अधिनियम की धारा-36 में ही उसे पक्षकारों पर न्यायालय की डिक्री के रूप में बाध्यकर माना जाता है।

5. सुलह विधि :

हमारे देश में अभी भी लोग इस बात का प्रयास करते हैं कि झगड़ों का सुलह के माध्यम से ही निस्तारण हो जाये और इसके लिए प्राय: अपने किसी सम्मानित रिश्तेदार को बीच में डालते हैं जो सुलहकर्ता के रूप में दोनों पक्षकारों की बातों को सुनकर उनका आपसी समझौता कराने का प्रयास करता है परन्तु जहां तक सुलह सम्बन्धी विवादों का प्रश्न है उसके लिए अभी तक कोई कानून नहीं बनाया गया था। अब जाकर प्रथम बार माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम 1996 को सृजित किया गया जिसके भाग-तीन में धारा 61 से धारा 86 द्वारा सुलह को कानूनी रूप देते हुए जो समझौता माध्यस्थम की सुलह से पक्षकारों के बीच कराया जाता है उसे माध्यस्थ के अवार्ड की तरह ही न्यायालय की डिक्री के रूप में प्रभावी बनाया गया है।

(क) सुलहकर्ता माध्यस्थ की तरह पक्षकारों के बीच साक्ष्य लेखबद्ध करने एवं अन्य सुनवाई के बावत औपचारिक कार्यवाही नहीं करता :-

जहां माध्यस्थ द्वारा पक्षकारों के बीच विवादों का निस्तारण किया जाता है तो उसमें माध्यस्थम दोनों पक्षकारों को अपना-अपना जवाबदावा एवं दस्तावेज दाखिल कराने के बाद पक्षकारों की उपस्थिति में उसे साक्ष्य लेखबद्ध करना होता है और उसके बाद जाकर उसे साक्ष्य पर विचार करने के बाद अपना निर्णय देना होता है, जिसे अवार्ड या पंचाट कहते हैं। जबकि सुलहकर्ता को ऐसी कोई कार्यवाही नहीं करनी पड़ती है, बल्कि उसे दोनों पक्षकारों से संयुक्त रूप से मिलकर या अलग-अलग मिलकर उनसे मशविरा करके उनके बीच सुलह के माध्यम से समझौता करवाना होता है जिसमें सुलहकर्ता को माध्यस्थ की तरह कोई अपना फैसला नहीं देना होता है बल्कि दोनों पक्षकारों को मानकर उनकी इच्छा रूप आपस में समझौता करवाना होता है। इस प्रकार पक्षकारों के बीच सौहार्द को बढ़ाकर उनके बीच वैमनस्य को समाप्त करते हुए रजामंदी अथवा सुलह के आधार पर ही पक्षकारों द्वारा ही फैसला करवाना होता है और सुलहकर्ता द्वारा कराया गया ऐसा फैसला पंचाट के रूप में न्यायालय की डिक्री के समान प्रभावी माना जायेगा।

(ख) सुलह के विवादों को निपटाने की शुरूआत कैसे की जा सकती है :-

जब पक्षकारों के बीच झगड़ा उत्पन्न होता है तो उसका अभिप्राय यह है कि दोनों पक्षकार के अधिकारों एवं कर्तव्यों के बीच में टकराव हुआ है और वह अपने दायित्वों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है इसलिए जो झगड़ा उत्पन्न होता है तो उसके निस्तारण की आवश्यकता पड़ती है। जब पक्षकार अपने झगड़े को सुलह के माध्यम से निस्तारण करना चाहते हैं तो उसके लिए दोनों पक्षकारों में से एक को आगे आना पड़ता है कि वह सुलह से झगड़े का निस्तारण करने की इच्छा दूसरे पक्षकार को प्रकट करे जिससे कि यदि दूसरा पक्षकार सुलह के लिए तैयार हो जाता है तभी पक्षकारों के बीच सुलहकर्ता की नियुक्ति का कार्य प्रारम्भ होता है और उसके बाद सुलह के प्रयास किये जा सकते हैं अत: इस अधिनियम की धारा-62 के अन्तर्गत यह प्राविधान किया गया है कि जो पक्षकार सुलह से झगड़े के निस्तारण के लिए शुरूआत करना चाहता है उसे दूसरे पक्षकार को लिखित रूप से अपने इस सुझाव के लिए आमंत्रित करने के लिए सूचित करना होगा और यदि निमंत्रण के प्राप्त होने के 30 दिन के अन्दर दूसरा पक्षकार इस सुलह के माध्यम से झगड़े को तय कराने को तैयार हो जाता है तो सुलह की कार्यवाही प्रारम्भ हो जाती है अन्यथा इस निमंत्रण दिये जाने के नोटिस के प्राप्त होने के 30 दिन बाद ऐसा निमंत्रण रद्द समझा जाता है।

(ग) सुलहकर्ता की नियुक्ति करने की प्रक्रिया :-

पक्षकारों के बीच सुलहकर्ता प्राय: एक ही होता है परन्तु यदि पक्षकार चाहे तो वह एक से अधिक सुलहकर्ता भी नियुक्त कर सकते हैं और उस स्थिति में इन सुलहकर्तागण को संयुक्त रूप में ही सुलह कराने के प्रयासों की कार्यवाही प्रारम्भ करनी होती है। यदि पक्षकार ऐसे किसी सुलहकर्ता के नाम पर सहमत नहीं होते तो वह किसी अन्य संस्था या व्यक्ति को यह कार्य सौंप सकते हैं कि वह किसी सुलहकर्ता का नाम सुझाये और ऐसे नाम के सुझाव पर विचार करके पक्षकारों की सहमति से सुलहकर्ता की नियुक्ति कर सकते हैं। सुलहकर्ता की नियुक्ति की व्यवस्था अधिनियम की धारा 64 में विस्तृत रूप से दी गयी है।

(घ) सुलहकर्ता द्वारा कैसे कार्यवाही प्रारम्भ की जायेगी :-

सुलहकर्ता की नियुक्ति होने के बाद वह दोनों पक्षकारों को यह निर्दिष्ट करेगा कि वे लिखित रूप में अपना प्रतिवेदन दें जिसमें यह उल्लेख किया हो कि उनके झगड़े की क्या प्रकृति है और उनके आपसी मतभेदों के क्या बिन्दु हैं इस प्रकार दोनों पक्षकारों से प्राप्त हुए प्रतिवेदन की एक-एक प्रति दूसरे पक्षकार को उपलब्ध करा दी जायेगी ताकि वे एक दूसरे के मतभेदों के कारणों को समझ सकें। इस प्रकार सुलहकर्ता द्वारा यदि प्राप्त हुए प्रतिवेदनों को देखने के बाद यानि पक्षकारों को अपने कथन के समर्थन में कोई दस्तावेज या तथ्यों को देना आवश्यक समझता है तो इसके लिए वह पक्षकारों से कह सकता है। ऐसे अतिरिक्त प्रतिवेदन या जवाबदावा मिलने पर इसकी प्रतिलिपि भी दूसरे पक्षकार को उपलब्ध करायी जायेगी। पक्षकारों के जवाबदावा प्राप्त होने के बाद सुलहकर्ता सिविल प्रक्रिया संहिता या साक्ष्य अधिनियम के प्राविधानों का पालन करने के लिए बाध्यकर नहीं है। इसलिए वह दोनों पक्षकारों के बीच उनके झगड़े को निपटाने के लिए सुलह कराने में जो भी सहायता की आवश्यकता हो, करेगा और वह पक्षकारों को आपसी समझौते के लिए पहुँचाने के लिए अपने प्रस्ताव भी समय-समय पर उनको दे सकता है। यदि सुलहकर्ता यह समझता है कि पक्षकारों को संयुक्त रूप से बुलाकर उनसे और बातचीत की जाये या पक्षकारों से अलग-अलग बात करके उनके झगड़े का हल ढूँढा जाये तो ऐसा करने के लिए वह अधिनियम की धारा 69 में प्रकाशित है। यदि किसी पक्षकार द्वारा सूचना गोपनीय रूप में उपलब्ध करायी जाती है तो सुलहकर्ता पर यह पाबन्दी है कि वह ऐसी गोपनीय सूचना को दूसरे पक्षकार को न बतायें। इस प्रकार सुलहकर्ता पक्षकारों के बीच जो झगड़े की जड़ होती है उसकी गुत्थी को सुलझाने के लिए अपनी सहायता उपलब्ध कराकर पक्षकारों के बीच मतभेद को समाप्त करके उन्हें आपसी समझौते के लिए राजी करता है।

(ड़) सुलहकर्ता की सहमति से पक्षकारों द्वारा समझौता न्यायालय की डिक्री के समान प्रभावी होता है :-

सुलहकर्ता को केवल सुलह कराकर पक्षकारों को ही समझौता करने के लिए तैयार करना होता है अत: सुलहकर्ता की कोई भी भूमिका न्यायालय के न्यायाधीश या मध्यस्थ के रूप में अपना कोई निर्णय न देना होता है परन्तु पक्षकारों द्वारा जो आपसी समझौता तैयार कराया जाता है उसमें सुलहकर्ता मात्र इसको अधिप्रमाणित करता है और यह अभिप्रमाणित किया गया आपसी समझौता जिसकी एक-एक प्रति दोनों पक्षकारों को उपलब्ध करायी जाती है, वह इस अधिनिमय की धारा-30 के अंतर्गत

न्यायालय की डिक्री के समान माना जाता है जो दोनों पक्षकारों पर बाध्यकर होता है। इस समझौते के परिणामस्वरूप दोनों पक्षकारों के मतभेद सदैव के लिए समाप्त हो जाते हैं और इसके विरूद्ध अपील करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

(च) सुलह कार्यवाही चलने के दौरान कोई भी पक्षकार न्यायालय में कार्यवाही नहीं कर सकता है :-

जब पक्षकार अपने झगड़े को सुलहकर्ता द्वारा निस्तारित कराने में तैयार हो जाते हैं तो सुलहकर्ता का कार्य प्रारम्भ हो जाता है इसलिए जब तक सुलहकर्ता के सम्मुख पक्षकारों की सुलह करने की कार्यवाही चलती रहती है तो उसके दौरान इस अधिनियम की धारा-77 में स्पष्ट व्यवस्था की गयी है कि जब तक पक्षकारों के अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए ऐसा आवश्यक न हो सुलह की कार्यवाही चलने के दौरान कोई भी पक्षकार न्यायालय में या माध्यस्थम के समक्ष झगड़े के निपटारे सम्बन्धी कार्यवाही नहीं कर सकता है।

विधिक सहायता प्राप्त करने के लिए प्रार्थना - पत्र

सेवा में,

सचिव,

उच्च न्यायालय विधिक सेवा समिति/उपसमिति/जिला विधिक सेवा प्राधिकरण/तहसील विधिक सेवा समिति,

तहसील - जनपद-

मैं ..... पुत्र/पुत्री/पत्नी/विधवा ..... निवासी .... विधिक सहायता/परामर्श प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित परिस्थितियों में आवेदन करता/करती हूँ-

1. समस्त स्रोतों से मेरी वार्षिक आय रु. 1,00, 000/- (एक लाख रुपया)तक है (आय प्रमाण पत्र संलग्न है)
2. मैं पात्रता की निम्न श्रेणी में आता हूँ/आती हूँ (जो लागू हो उसके सामने सही का निशान लगायें) :-
   (क) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति
   (ख) मानव दुर्व्यवहार या बेगार का सताया हुआ
   (ग) स्त्री या बालक
   (घ) मानसिक रूप से अस्वस्थ
   (ड़) बहु विनाश, जातीय हिंसास, जातीय अत्याचार, बाढ़, सूखा, भूकम्प या औद्योगिक विनाश की दशाओं के अधीन सताया हुआ व्यक्ति।
   (च) औद्योगिक कर्मकार
   (छ) युद्ध में शहीद सैनिक आश्रित
   (ज) अभिरक्षा में (प्रमाण पत्र संलग्न करें)
3. विधिक सेवा परामर्श की प्रकृति विवाद का कारण, दावे प्रतिवादी आदि का संक्षिप्त विवरण।
4. क्या विधिक सेवा परामर्श प्राप्त करने के लिए पूर्व में कोई प्रार्थना पत्र दिया था? यदि हाँ तो उसका परिणाम?
5. मुझे निम्न प्रकार की कानूनी सहायता वांछित है :-
   (1) वाद दायर करने/प्रतिवाद करने हेतु नि:शुल्क अधिवक्ता की सेवायें
   (2) कोर्ट फीस की मद में अदा की जाने वाली धनराशि
   (3) अभिलेख प्राप्त करने हेतु व्यय की गयी/व्यय होने वाली धनराशि
   (4) वाद व्यय की मद में व्यय की गयी धनराशि
   (5) केवल विधिक परामर्श

मैं विश्वास दिलाता हूँ/दिलाती हूँ कि विधिक सेवा प्रदान किये जाने की स्थिति में मैं उपलब्ध कराये गये अधिवक्ता तथा जिला प्राधिकरण/उच्च न्यायालय समिति को पूर्ण सहयोग प्रदान करूंगा/करूंगी और किसी भी बात को नहीं छुपाऊँगा/छुपाऊँगी।

प्रार्थी/प्रार्थिनी

पता -

नाम -